जैव विविधता का संकट

डॉ. दिनेश मणि

आज पर्यावरणविदों और इकोलॉजी (पारिस्थितिकी विद) के सामने जैव विविधता का संरक्षण एक महत्वपूर्ण समस्या बनकर खड़ा है। जैव विविधता से हमारा आशय तमाम छोटे-बड़े पौधों तथा मनुष्य सहित सभी जीवों की विभिन्न जातियों व प्रजातियों से है। इन्हीं से जलीय तथा स्थलीय इको तन्त्र का निर्माण होता है और कई तरह के कामकाज सम्पादित होते हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जैव विविधता की सीमा में मात्र जंगली या प्राकृतिक जीव ही नहीं अपितु पालतू प्रजातियों (जैसे उपयोगी फसलें व पालतू जानवर) तथा उस अनुवांशिक सामग्री (जैसे बीज इत्यादि) को भी शामिल किया गया है। जो सदियों से हमारे जीवन की अनिवार्य व मूलभूत आवश्यकता रही है।

जैव विविधता पर इतनी अधिक चर्चा करने तथा अन्तर्राष्ट्रीय संधि तैयार करने के कई कारण हो सकते हैं। सबसे महत्वपूर्ण कारण तो यह है कि आज यह साफ तौर पर अनुभव किया जा रहा है कि पौधों तथा जीवों की कई दुर्लभ प्रजातियों का भविष्य संकट में है क्योंकि

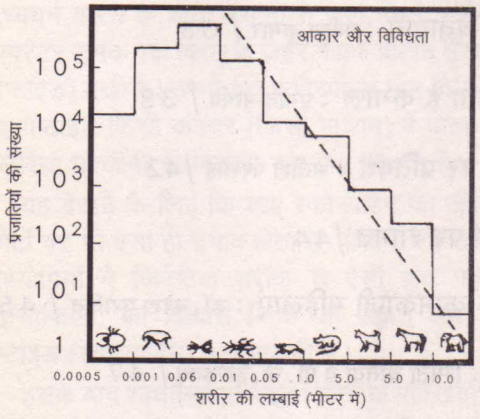

धरती के रहवासी जीवों में से एक बड़ा हिस्सा ज़मीन पर रहने वाले जीवों का है। इस चित्र में ज़मीन पर रहने वाले विभिन्न आकार के जीवों की कुल प्रजातियां प्रदर्शित की गई हैं। स्पष्टतः 5 मि.मी. से 1 सें.मी. के बीच आकार वाले वर्ग में विविधता अपने चरम पर होती है। इसके बाद वह कम होने लगती है।

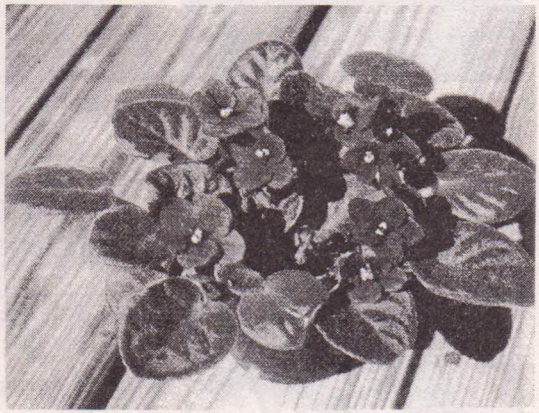

अफ्रीकन वॉयलट: ये जाने-पहचाने घरेलू पौधे अपने प्राकृतवास दक्षिण अफ्रीका से पूरी तरह से लुप्त हो चुके हैं। इन पर दुनिया से विलुप्ति का खतरा तो नहीं है लेकिन इनकी जंगली प्रजाति शायद खत्म हो चुकी है।

उनके प्राकृतिक निवास स्थान तेज़ी से खत्म होते जा रहे हैं। चाहे भारत में हिमालय या गढ़वाल क्षेत्र के जंगल हों, ब्राज़ील में अमेज़न घाटी के जंगल हों, मलेशिया के इमारती लकड़ी के वन हों या घाना के झाड़ीदार सघन वन, सभी तेज़ी से खत्म होते जा रहे हैं। नतीजतन प्रजातियां हर दिन से लेकर हर घंटे की दर से गुम होती जा रही हैं। विनाश की यही दर कायम रही तो अगले दो-तीन दशकों में दुनिया की प्रजातियों का लगभग दसवां हिस्सा नष्ट हो चुका होगा।

अर्थशास्त्री तथा पारिस्थितिकीविद् इस बात से सहमत हैं कि जैव विविधता मानवता के लिए विशेष महत्व रखती है। लोग अपनी आवश्यकताओं के लिए जैव विविधता पर अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर हैं। विकसित देश तो ऐसी संधि के लिए दबाव डाल रहे हैं जिसमें वनों को 'वैश्विक सम्पत्ति' घोषित कर इसके इस्तेमाल के नियम बनाए जाएं। इन देशों की चिन्ता यह भी है कि वनों के विनाश के साथ-साथ विभिन्न जीव-जन्तुओं का भी विनाश हो रहा है। हार्वर्ड के जाने माने जीव विज्ञानी ई.ओ. विल्सन इसे 'जीवन का विनाश' कहते हैं। 1 7 0 करोड़

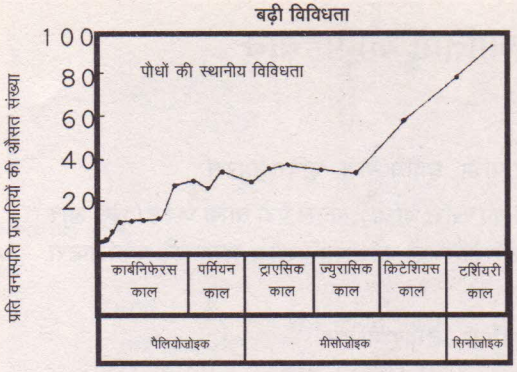

जीवाश्मों के रिकॉर्ड बताते हैं कि 40 करोड़ साल पहले जब पौधों ने ज़मीन पर पांव जमाने शुरू कर दिए थे, तब से किसी एक स्थान पर पौधों की प्रजातियों की संख्या में निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। यह बढ़ोत्तरी ज़मीन आधारित इकोसिस्टम की बढ़ती जटिलता को प्रदर्शित करती है। पौधों, उनके परागण में सहायक जीवों और बीज-प्रसारकों के आपसी सम्बंधों का इस विविधता को और समृद्ध करने में अच्छा खासा हाथ है।

हेक्टेयर में फैले जैव वैविध्य वाले अधिकांश उष्ण कटिबन्धीय वन गरीब देशों में ही हैं। विल्सन का अनुमान है कि वनों की कटाई से प्रति वर्ष 50,000 यानी रोज़ाना 140 अकशेरुकी (बिना रीढ़ वाले) जीवों की प्रजातियां लुप्त हो रही हैं।

खाद्यान्न (दूध, अण्डा, मांस-मछली आदि) द्वारा भोजन की आपूर्ति, नैसर्गिक दृश्यों के आनन्द तथा शिकार के अतिरिक्त जैव विविधता का एक और महत्वपूर्ण लाभ पारिस्थितिकीय तंत्र सम्बंधी क्रियाओं द्वारा पोषक तत्वों का स्थानान्तरण तथा पुनर्चक्रण कर मिट्टी की उर्वरा शक्ति को कायम रखना है। मिट्टी के सजीव घटक मिट्टी को उर्वर बनाने में तथा फसलों व वनों को उगाने में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि करने में केंचुओं का सक्रिय योगदान रहता है क्योंकि ये मिट्टी को छिद्रयुक्त बनाते हैं तथा ऑक्सीजन एवं जल की आपूर्ति को बढ़ाते हैं। मिलीपेड (कनखजूरा, गिंजाई) तथा अन्य कीड़े भी मिट्टी की उर्वरता को सुधारते हैं।

एक अनुमान के अनुसार जंगल की एक ग्राम मिट्टी में दस लाख से अधिक एक ही प्रकार के जीवाणु (बैक्टीरिया), लगभग एक लाख यीस्ट कोशिकाएं तथा 50,000 कवक तन्तु (जाल) के हिस्से मौजूद रहते हैं। एक ग्राम उर्वर खेत की मिट्टी में 2.5 अरब से अधिक जीवाणु (बैक्टीरिया), 40,000 कवक, 50,000 शैवाल (एल्गी) तथा 30,000 प्रोटोज़ोआ पाए जाते हैं। इन सूक्ष्मजीवों द्वारा नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, सल्फर, आयरन, मैंगनीज़ आदि जैसे विभिन्न पोषक तत्वों का परिवर्तन उच्च पौधों द्वारा उपयोग किए जाने वाले रूपों में होता रहता है। फलस्वरूप पौधे अपनी वृद्धि कर मनुष्य के लिए उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराते हैं।

भारत जैव विविधता के मामले में भाग्यशाली है। हमारा देश समशीतोष्ण है। अंडमान और अरुणाचल प्रदेश में समशीतोष्ण वर्षा वन हैं तो राजस्थान में मरुस्थल और लद्दाख में बर्फ की चादर फैली है। अपनी अति समृद्ध जैव विविधता के कारण भारत उन 12 देशों में से एक है जो अपनी जैव विविधता के लिए विश्व विख्यात हैं। सच तो यह है कि संसार के समस्त पौधों और जानवरों का अधिकांश हिस्सा तीसरी दुनिया के देशों में ही पाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ पर्यावरण कार्यक्रम ने जोखिमग्रस्त प्रजातियों को लेकर एक अध्ययन किया था। इसके अनुसार अब तक पहचानी गईं 15 लाख प्रजातियों में 7.5 लाख रीढ़धारी जन्तु प्रजातियां हैं और 2.5 लाख पादप प्रजातियां हैं। शेष अकशेरुकी, कवक और सूक्ष्मजीव हैं।

वैसे यह स्पष्ट हो चुका है कि जैव विविधता में लगातार हो रहे ह्रास का मूल कारण मानवीय गतिविधियां और प्रकृति के साथ की गई छेड़छाड़ है। एक अनुमान के अनुसार आने वाले 30 वर्षों में विलुप्त होने वाली प्रजातियों की संख्या 15,000 से 40,000 प्रति वर्ष होगी। इसका अर्थ यह हुआ कि हम प्रति दिन 40 से

बीते ज़माने की बात हो चुका डाकिया कबूतर। आखिरी ज्ञात कबूतर 1914 में सिनसिनाटी चिड़ियाघर में मारा गया था।

विलुप्ति के जोखिम वाले प्रजातियों की पहचान

गुण	उदाहरण
निम्न प्रजनन दर	नीली व्हेल, डाकिया कबूतर, जायंट पांडा, ध्रुवीय भालू, वूपिंग सारस
विशिष्ट भोजन	एवर गलेड्स गिद्ध (दक्षिण फ्लोरिडा का खास घोंघा), काले पैरों वाला फेरेट (घूंस और बिलखोद्दा), जायंट पांडा (बांस), ऑस्ट्रेलियाई कोआला (खास तरह की यूकेलिप्टस (नीलगिरि) की पत्तियां)
उच्च पोषकीय भोजन	बंगाल टाइगर, गंजी चील, भारतीय गिद्ध, टिम्बर भेड़िया
बड़ा आकार	बंगाल टाइगर, अफ्रीकी शेर, हाथी, जावाई गेंडा, अमरीकी बाईसन, जायंट पांडा, ग्रिज़ली भालू
सीमित या	किर्तलैण्ड का वार्बलर (यह 6 से 15 साल
विशिष्ट रहवास या प्रजनन क्षेत्र	पुराने जैक पाईन पेड़ पर ही घोंसले बनाता है), वूपिंग सारस (भोजन व रहने के लिए कीचड़ पर निर्भर रहता है),उरांगुटान (सुमात्रा और बोर्नियो द्वीपों पर ही पाया जाता है), हरा समुद्री कछुआ (केवल कुछ ही तटों पर अण्डे देता है), गंजी चील (जंगली तटों पर रहना पसन्द करती है)
केवल एक ही स्थान पर मिलने वाले	वुडलैण्ड कैरीबिऊ, हाथी सील और कई अन्य विशिष्ट द्विपीय प्रजातियां
तयशुदा प्रवासी पैटर्न	नीली व्हेल, वूपिंग सारस, वार्बलर,
लोगों या पालतू पशुओं पर आश्रित	टिम्बर भेड़िया, कुछ मगरमच्छ
विशिष्ट व्यवहार वाले	डाकिया कबूतर और सफेद कलगी वाला कबूतर (बड़े समूहों में घोंसले बनाता है), लाल सिर वाला कठफोड़वा (कारों के सामने उड़ता है), की हिरन (राजमार्गों पर सिगरेट के ठूंठ ढूंढता रहता है), कैरोलिना तोता (एक चिड़िया के मारे जाने पर बाकी समूह उस की लाश पर झूमता रहता है)

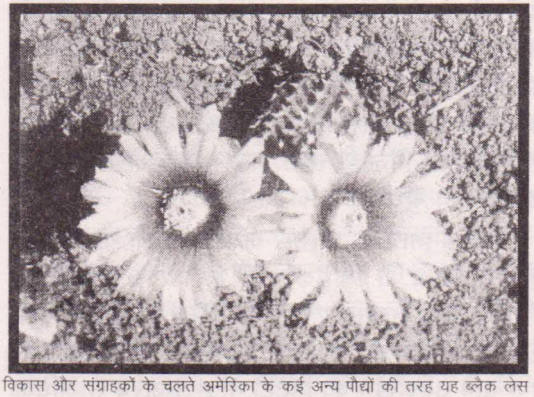

विकास और संग्राहकों के चलते अमेरिका के कई अन्य पौद्यों की तरह यह ब्लैक लेस कैक्टस भी विलुप्ति के कगार पर पहुंच गया है।

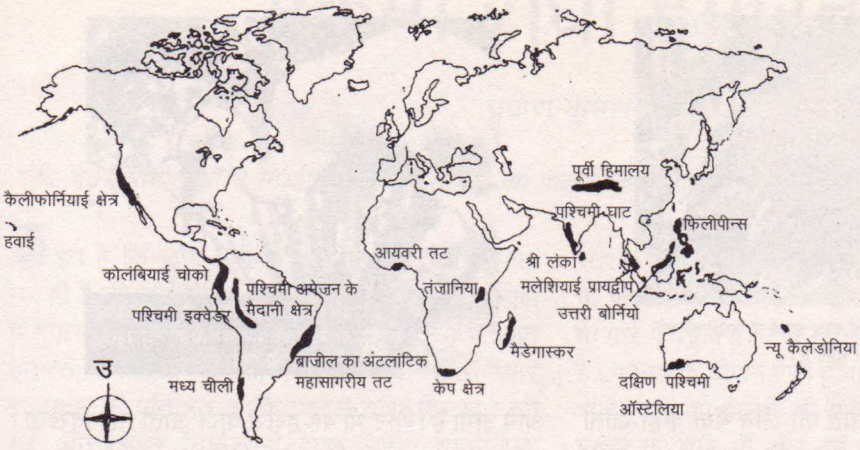

नक्शे में दर्शाए 18 जैवीनी क्षेत्र बड़ी संख्या में प्रजातियों की पनाहगाह हैं। ये अंचल-विशिष्ट प्रजातियां मानवीय दखलअंदाज़ी के चलते अब लुप्तप्राय: हो चली हैं। इस निशानदेही में केवल जंगली और भूमध्यसागरीय झाड़दार जंगलों को शामिल किया गया है। नदियां, झीलें और कोरल रीफ इसमें नदारद हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में घनी जैव-विविधता वाले दो क्षेत्र हैं - पश्चिमी घाट और पूर्वी हिमालय।

140 प्रजातियां खोते जाएंगे। इसका एक मुख्य कारण समशीतोष्ण वर्षा वनों का काटा जाना है। 1992 में वॉशिंगटन स्थित वर्ल्ड वॉच इंस्टीट्यूट की प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार वनों के काटे जाने के कारण हम हर दिन पक्षी, स्तनपायी या पादप की एक प्रजाति खोते जा रहे हैं।

हमारा देश वानस्पतिक विविधता के लिहाज़ से बहुत धनी है। विश्व की लगभग ढाई लाख वनस्पति जातियों में से लगभग 45,000 हमारे यहां पाई जाती हैं। इसमें पुष्पी पौधों के अलावा फर्न, शैवाल, कवक जैसी गैर पुष्पी वनस्पतियां भी शामिल हैं। पुष्पी पौधों की संख्या लगभग 15 हज़ार है। इसमें से लगभग 9 हज़ार वनस्पति जातियां देश में ही पाई जाती हैं, अन्यत्र कहीं नहीं।

हमारे देश में वनस्पतियों की लगभग 2000 जातियां लुप्त होने की कगार पर हैं जबकि कुछ लुप्त हो चुकी हैं। अन्य देशों में भी यह संकट मंडरा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (आई.यू.सी.एन.) के अनुसार दुनिया भर की लगभग 10 प्रतिशत (यानी 25,000) वनस्पतियां लुप्तप्राय हैं।

वनस्पतियों के अलावा वन्य जीवों का अस्तित्व भी खतरे में है। भारत में ऐसे जीवों की सूची में 100 से अधिक जानवर हैं। इनमें प्रमुख हैं बाघ, चिंकारा, कस्तूरी मृग, बर्फीला चीता, मगर, घड़ियाल, काली गर्दन वाला सारस, महान भारतीय सारंग या ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड, बाज़, सफेद पंख वाली वुड डक आदि। ये सारे जन्तु अपनी विशेषताओं के कारण शिकारियों के प्रिय रहे हैं। अत्यधिक शिकार के कारण शेर का जीवन भी खतरे में पड़ गया है। पिछले कुछ सालों में इनकी संख्या इतनी कम हो गई कि सरकार को इनके शिकार पर प्रतिबंध लगाना पड़ा। 1930 में भारत में बाघों की संख्या तकरीबन 40,000 थी और तमाम एशियाई देशों में इनकी संख्या लगभग एक लाख थी। 1972 में राष्ट्रीय स्तर पर बाघों की गणना से पता चला कि भारत में मात्र 1827 बाघ जीवित बचे थे। उसी वर्ष 'बाघ परियोजना' लागू की गई जिसके परिणाम काफी उत्साहवर्धक रहे। परियोजना लागू होने के लगभग 12 वर्षों बाद अर्थात 1985 में बाघों की संख्या बढ़कर 4200 तक पहुंच गई।

संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने 2500 ऐसे दलहनी पौधे चुने हैं जो विकासशील देशों में प्रोटीन कुपोषण की समस्या को काफी हद तक दूर कर सकते हैं। ऐसी वनस्पतियां जिन पर वर्तमान में हमारा भरण-पोषण टिका है, उन्हें खतरनाक रोगों से बचाने में कई वनस्पतियां हमारी मदद कर रही हैं। खेतों में उगाई जाने वाली कई वनस्पतियों की वन्य जातियों में कई रोगरोधी या कीटरोधी जीन पाए गए हैं। इन उपयोगी जीनों को खेत की किस्मों में डालकर रोगरोधी या कीटरोधी किस्में तैयार की जा रही हैं। वनस्पतियों के जीनों का संरक्षण एक्स सीट्र विधि द्वारा किया जाता है। इस तकनीक के अन्तर्गत वनस्पतियों के बीज, कंद, परागकणों आदि का बड़े पैमाने पर शीत संग्रहण किया

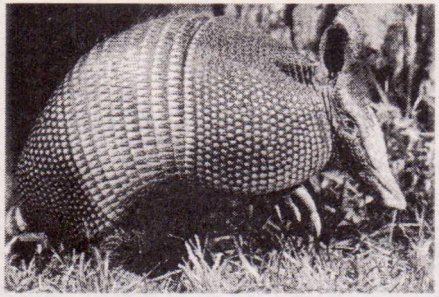

कुष्ठ रोग के इलाज में हो रहे शोध कार्यों में अर्मेडिलो का इस्तेमाल होता है।

इस सारस की गिनती 15 से भी कम हो गई थी जब इसके प्रजनन क्षेत्रों को और बढ़ाने की बात सोची गई।

जाता है। इस प्रकार के संग्रह को जीन बैंक कहा जाता है। भारत में 'राष्ट्रीय पौध अनुवांशिक संसाधन ब्यूरो' (एन.बी.पी.जी.आर.) के अन्तर्गत 'जीन बैंक' की स्थापना की गई है।

जीन संरक्षण के लिए ऊतक संवर्धन (टिशू कल्चर) तकनीक का सहारा भी लिया जा रहा है। इसके अन्तर्गत वनस्पतियों के विभाज्य ऊतकों को बहुत कम तापमान (-196° से) पर संग्रह किया जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि अगर कभी परमाणु युद्ध ने धरती पर प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न कर ली तो मानव सभ्यता को फिर से पनपाने में ये 'जीन बैंक' ही काम आएंगे।

यद्यपि पिछले कुछ वर्षों से प्रकृति के इस नाजुक सन्तुलन से छेड़छाड़ करने का नतीजा मनुष्य को नज़र आने लगा है। फिर भी वह इससे बाज़ आता नहीं दिखता। हमें समझना होगा कि जैव विविधता हमारे भोजन, औषधि, वस्त्र, संस्कृति और शायद मानसिकता तक की बुनियाद है। आधुनिक सभ्यता भी बहुत हद तक जैव संसाधनों पर ही निर्भर है।

यह वास्तविकता है कि हम अपने जैव संसाधनों से अभी भी पूरी तरह से परिचित नहीं हो पाए हैं। बहुत सम्भावना है कि भविष्य में हम अपनी कई समस्याओं का समाधान इसी जैव-विविधता में ही पा जाएं। अत: हमें इसके संरक्षण के प्रयास करने चाहिए और ये प्रयास तभी सार्थक होंगे जब ये व्यापक स्तर पर किए जाएंगे। इसलिए ज़रूरी है कि विश्व स्तर पर होने वाली संधि सभी देशों के लिए हो, न कि कुछेक प्रभुता सम्पन्न देशों के लिए।

(स्रोत विशेष फीचर्स)

नया पता

एकलव्य ई -7/ एच.आई.जी. 453

अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016

फोन : 0755-463 380,464 824